मायावी सरोवर

डॉ. इन्द्र सेंगर

H
028.5 Se 56 M

56M

INDIAN INSTITUTE
OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY, SHIMLA

मायावी सरोवर

डॉ. इन्द्र सेंगर

CATALOGUED

प्रकाशक

साहित्य वीथी

27/111, विश्वास नगर

शाहदरा, दिल्ली–32

H
028.5
Se56 M

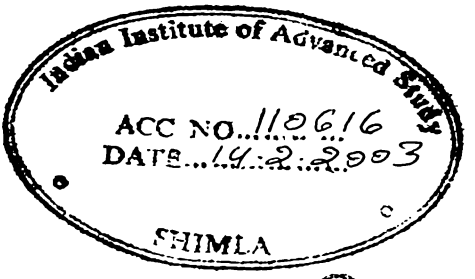

Library IIAS, Shimla
H 028.5 Se 56 M

00110616

© प्रकाशक

प्रकाशक	साहित्य बीथी 27/111, विश्वास नगर शाहदरा, दिल्ली–32
दूरभाष	2429079
संस्करण	1997
मूल्य	20.00 रूपये

MAYAVI SAROVAR [Childern stories]
by Dr. INDRA SENGER

अपनी बात

प्रिय बाल मित्रो ! मैं अपने जीवन-सफर के चालीस साल पूरे कर चुका हूं। इस सफर में दिन-प्रतिदिन आम आदमी के गिरते नैतिक स्तर को देखकर मुझे राष्ट्र और विश्व के भविष्य के बारे में बहुत चिन्ता होती है। अपनी इच्छाओं की भूख मिटाने के लिए आज का आदमी अपने चरित्र को ताक पर रख देता है। अपने राष्ट्र को बेचने के लिए तैयार है। आज देश में जो अफरा-तफरी मची हुई है, उसका मूल कारण है कि विज्ञान की भौतिक सुख-सुविधाओं की चमक-दमक में हम अपने चरित्र को त्यागते जा रहे हैं।

नई उमर की नई फसल आज घोर प्रदूषण में पल रही है। इतना ही नहीं, वह इस गंदले तालाब में कंठ तक डूबी हुई है। इस कथा-माला को लिखने का मेरा उद्देश्य नई फसल को नैतिक शिक्षा देकर उसे सड़ांध भरे गंदले तालाब से बाहर निकालना है। उनके चरित्र का निर्माण करना है।

मुझे तुमसे पूरी आशा है कि इन कहानियों से अपने चरित्र का निर्माण करोगे और जीवन की परीक्षा में सफल होगे तथा देश को नया सूरज दोगे।

30/106, पंचशील गली नं. 7,
विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली- 110032

तुम्हारा
इन्द्र सेंगर

कहानी क्रम

1. सच्चा जौहरी 5
2. जीत की हार 11
3. घमंडी का सिर नीचा 17
4. मायावी सरोवर 23

सच्चा जौहरी

बहुत समय पहले की बात है। मयराष्ट्र में एक बहुत बड़ा जौहरी रहा करता था। वह 'सच्चा जौहरी' के नाम से मशहूर था। उसकी दुकान आभूषणों के लिए बहुत मशहूर थी। इस प्रसिद्धि में उसकी ईमानदारी ने भी चार चाँद लगा दिए थे। चाहे कोई बच्चा चला जाए, चाहे बड़ा, सबके लिए उसका एक ही दाम होता था। इसी कारण से उसकी पहुंच राजमहलों तक भी थी। बड़े-बड़े राजा-महाराजा, सेठ-साहूकार भी उसी की दुकान से गहने खरीदा करते थे। इतना ही नहीं, पूरे भारत के बड़े-बड़े शहरों में भी उसकी दुकानें थीं। उसने अपनी दुकानों को तीन भागों में बांट रखा था। बहुमूल्य आभूषणों को दुकान के अन्दर तिजोरी में रखा जाता था, बीच के भाग में मध्यम दर्जे के आभूषण रखने का इन्तज़ाम था और बाहर के भाग में फैशन के दिखावटी और सस्ते जेवर सजाए जाते थे। ये जेवर नकली हुआ करते थे।

एक बार की बात है। एक गरीब महिला उसकी दुकान पर पहुंची। उसने बाहर के भाग में टँगे जेवरों में मोतियों-जैसा चमकदार एक हार देखा। उसके मोती बड़े ही सुन्दर थे। उनमें अनोखी चमक थी। देखने में एकदम असली लगते थे। उस पर भी हार रखने का केस

मखमली था। उस हार ने उस महिला का मन मोह लिया। हार वास्तव में ही अत्यन्त सुन्दर था। महिला ने उस हार को खरीद लिया। उसकी कीमत थी—केवल एक रुपया।

जब कभी वह महिला उस हार को पहनकर बाहर निकलती, तो देखने वाले उस हार की तारीफ करते नहीं थकते और उसकी कीमत पूछते थे। परन्तु वह महिला उसकी कीमत न बताकर जौहरी का नाम बता दिया करती थी।

एक दिन की बात है। वह हार टूट गया। उसके मोती बिखर गए। महिला ने उन मोतियों को इकट्ठा तो कर लिया परन्तु एक मोती कम रह गया। हार का मेल बिगड़ गया और उसकी सुन्दरता खत्म हो गई। महिला ने सोचा, 'क्यों न मैं उसी जौहरी से मिल लूं। वह इसे वैसा ही सुन्दर जरूर बना देगा।'

यह सोचकर वह सच्चे जौहरी के पास पहुंची।

महिला ने जौहरी से कहा, 'हमने कुछ महीने पहले यह हार आपसे खरीदा था।'

जौहरी ने कहा, 'हां ! कहिये ?'

महिला बोली, 'इस हार का एक मोती खो गया है। इसमें उसी मेल का मोती डालकर इसे बना दीजिये।'

जौहरी ने उत्तर दिया, 'यह माला हमने ही बेची है। अवश्य ठीक हो जायगी। जो मोती कम हो गया है,

उसकी जगह दूसरा मोती लग जाएगा।'

महिला ने पूछा, 'इसमें कितने पैसे लगेंगे।'

जौहरी ने कहा, 'सौ रुपए लग जाएंगे।'

इतना सुनकर महिला सोच में पड़ गई। उसने पूरा हार एक रुपये में खरीदा था। अब एक मोती की कीमत सौ रुपए।

उसने चकित हो कर पूछा, 'पूरे हार की कीमत मैंने एक रुपया दी थी। अब केवल एक मोती की कीमत सौ रुपये मांग रहे हो।'

जौहरी ने उत्तर दिया, 'बहन जी ! आपकी बात गलत नहीं है, परन्तु सच्चाई यह है कि यह कीमती हार हमारे नौकर ने भीतरी तिजोरी में रखने के बजाय बाहर के भाग में रख दिया था। यह आपका सौभाग्य था कि आप उस असली हार को नकली समझकर एक रुपये में खरीद ले गईं। बाद में, जब हमको उस नौकर की भूल का पता चला तो हमने उसे नौकरी से निकाल दिया। लेकिन अब नया मोती तो नकली मोती के भाव नहीं मिल सकता।'

यह सुनकर महिला के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, 'अरे ! इतने दिनों तक मैं राजा-महाराजाओं, सेठ-साहूकारों की पत्नियों- जैसा कीमती हार पहनती रही। अब मैं इस हार की असलियत समझ पाई कि हर आदमी इसकी सुन्दरता का इतना बखान क्यों करता था।'

कुछ देर तक, वह महिला खामोश खड़ी रही। फिर,

वह सोचनी लगी, 'यह जौहरी कितना ईमानदार है। अपने नौकर की गलती को मेरा सौभाग्य कह रहा है। मेरे सौभाग्य ने ही उस कर्मचारी को अभागा बना दिया। मुझे यह हार पहनने का कोई अधिकार नहीं है। उस कर्मचारी की रोजी-रोटी छिन गई। बेचारा कैसे गुजारा करता होगा ? मैं यह हार जौहरी को लौटा दूंगी।'

मन में उठते सच्चाई और अच्छी नीयत के तूफान को वह अधिक देर तक नहीं रोक सकी। वह नम्रता से बोली, 'देखिये, भूल तो सबसे हो जाती है। नकली समझकर यह माला आपने मुझे एक रुपये में दे दी थी। अब इसे आप रख लीजिये। बेचारे उस नौकर को फिर से काम पर बुला लीजिये।'

इतना कहकर वह महिला वापस लौटने के लिए घूम पड़ी। तभी जौहरी ने उसे रोककर कहा, 'बहन जी ! रुकिये, आपको मैं ऐसे नहीं जाने दूंगा।'

महिला ने चौंककर कहा, 'क्यों ?'

जौहरी बोला, 'आपने माला लौटा कर अपनी जिस ईमानदारी और नेकनीयत का परिचय दिया है। हमें भी तो उसका बदला चुकाने का मौका दीजिये।'

इतना कहकर जौहरी दुकान के अन्दर गया और एक हीरे की अंगूठी ले आया। उसने वह उस महिला को भेंट कर दी। साथ ही अपने मुनीम को आदेश दिया, 'मुनीम जी ! उस नौकर को फिर से काम पर रख लिया जाय।'

सच्चा जौहरी मन-ही-मन यह सोचकर बहुत खुशी महसूस कर रहा था कि मैं आज अकेला नहीं हूं। देश में अभी ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो सच्चाई और ईमानदारी की खातिर स्वार्थ और लालच से कोसों दूर हैं।

जीत की हार

हनुमान जी जब लंका-दहन करके लौट रहे थे, तब वे अपने मन में सोचने लगे, 'मैं समुद्र लांघ कर लंका में पहुंच गया। मैंने सीताजी का पता लगाया। मैंने रावण का अहंकार भी चूर-चूर कर दिया। उसकी लंका को भी भस्म कर दिया। मैं वास्तव में ही बहुत बलवान हूं। मेरे बराबर बलवान कभी भी संसार भर में कोई नहीं हुआ होगा।

भगवान् राम तो अन्तर्यामी थे। उन्हें यह बात ताड़ने में देर न लगी। उन्होंने हनुमान जी की परीक्षा का कौतुक रच दिया। हनुमान जी गर्जना करते हुए आ रहे थे। रास्ते में अचानक उन्हें प्यास लगी। प्यास इतनी तेज थी कि उनका आगे बढ़ना दूभर हो गया। वे आकाश मार्ग से उड़े चले आ रहे थे। उनके नीचे महेन्द्राचल था। हनुमान ने नीचे पर्वत पर अपनी नजर पसार कर देखा, तो उन्हें एक मुनि बैठे दिखाई दिए। वे एकदम शान्त

बैठे थे। हनुमान ने अनुमान लगा लिया कि यहां पानी जरूर होगा। इसलिए वे पर्वत पर उतर आए और उन मुनि के पास जाकर बोले, 'मुनिवर ! मैं सीताजी की खोज करके लौट रहा हूं। मुझे बहुत प्यास लग रही है। थोड़ा-सा जल दीजिए या किसी जलाशय का पता दीजिए ताकि मैं अपनी प्यास बुझा सकूं।'

मुनि ने अपनी तर्जनी अंगुली से एक जलाशय की ओर इशारा कर दिया। हनुमान जी ने सीताजी द्वारा दी गईं चूड़ामणि और मुद्रिका मुनि के पास रख दीं और उस जलाशय पर अपनी प्यास बुझाने के लिए चले गए। इतने में ही एक दूसरा वानर वहां आ गया। उसने इन दोनों आभूषणों को उठाकर मुनि के कमंडल में डाल दिया और भाग गया।

जब हनुमान जी जलाशय से जल पीकर लौटे तो वहां चूड़ामणि और मुद्रिका न देखकर दंग रह गए। उनके पैरों के नीचे की जमीन खिसक गई। उन्होंने आंखें तरेरकर मुनि से पूछा, 'मुने ! मेरी चूड़ामणि और मुद्रिका कहां हैं ?'

मुनि कुछ बोले नहीं, सिर्फ अपनी भृकुटि से कमंडल की ओर संकेत भर कर दिया। हनुमान जी ने गर्व से उस कमंडल को देखा, तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। हनुमान जी ने देखा कि उस कमंडल में उसी प्रकार की राम-नाम की हजारों मुद्रिकाएं पड़ी हुई हैं। अब वे बहुत

घबराये। अपनी मुद्रिका को भी नहीं पहचान सके। उन्होंने कौतूहल से मुनि से पूछा, 'मुनिवर ! इतनी असंख्य मुद्रिकाएं आपको कहां से मिलीं ? कृपया मुझे यह बता दें कि इनमें मेरी मुद्रिका कौन-सी है ?'

मुनि ने उत्तर दिया, 'पवनसुत ! जब-जब भगवान् राम अवतार लेते हैं, तब-तब सीता मां का अपहरण होता है। हनुमान को उनकी खोज के लिए जाना पड़ता है। लंका जलानी पड़ती है। मां सीता अपनी चूड़ामणि और मुद्रिका उन्हें देती हैं और जब हनुमान लौटकर आतें हैं, तब सीता द्वारा दी गई चूड़ामणि और मुद्रिका यहीं छोड़ जाते हैं। वे ही सारी मुद्रिकाएं इसमें पड़ी हैं।'

हनुमान ने आश्चर्य से पूछा, 'मुनिवर ! यह आप क्या कह रहे हैं ?'

मुनि ने उत्तर दिया, 'अंजनीनन्दन ! मैं सत्य कह रहा हूं। तुमसे पहले भी न जाने कितने राम अवतार ले चुके हैं ? कितनी सीताओं का अपहरण हो चुका है ? कितने हनुमान यहां आए हैं ? और उन मुद्रिकाओं को यहां छोड़ गए हैं।'

अब क्या था, हनुमान का गर्व चूर-चूर हो गया। हनुमान ने उत्सुकता से पूछा, 'मुनीश ! कितने राघव अवतार ले चुके हैं ? कितने हनुमान आपके यहां आ चुके हैं ?'

मुनि ने उत्तर दिया, 'यह तो मुद्रिकाओं की गिनती से

ही पता लग सकेगा। गिन लीजिए।'

हनुमान जी मुद्रिकाओं को गिनने लगे। परन्तु वे तो अनगिनत थीं। उनका कोई अन्त नहीं था। हनुमान जी की कोशिश बेकार गई। हनुमान जी ने उसी क्षण सोचा, 'मैं अपनी जीत पर कितना फूल रहा था। मेरे से पहले न जाने कितने योद्धा यह काम कर चुके हैं। इसमें मेरी तो कोई गिनती ही नहीं है।'

अब हनुमान समझ गए कि यह मुनि कोई साधारण मुनि नहीं है। यह जानकर उन्होंने उनके चरणों में सिर झुका दिया और प्रणाम करके राम के पास चल दिए। रास्ते में वे अंगद आदि से मिले। उन्हें सीता की खोज का समाचार दिया। सबने उनके कार्य और वीरता की प्रशंसा की परन्तु हनुमान की आंखों के सामने मुनि की कहानी का दृश्य बार-बार आ रहा था। उन्हें ऐसा लग रहा था कि उनकी प्रशंसा नहीं बल्कि उनका अपमान किया जा रहा है।

जब हनुमान भगवान् राम के पास पहुंचे तो उनसे हाथ जोड़कर विनती करने लगे, 'भगवन्! सीता मां का पता लग गया है। उन्होंने जो चूड़ामणि और मुद्रिका दी थी, मैं उन्हें एक मुनि के पास रखकर जलाशय में पानी पीने चला गया था। मेरे पीछे वहां एक वानर आया। चूड़ामणि और मुद्रिका को मुनि के कमंडल में डाल गया। जब मैं पानी पीकर लौटा तो मैंने उन्हें उस कमंडल में

खोजा। परन्तु उसमें तो असंख्य मुद्रिकाएं थीं, मैं सीता मां की असली मुद्रिका नहीं पहचान सका और मजबूरी में बिना मुद्रिका के आपके सामने खड़ा हूं। मुझे माफ कर दीजिए।'

भगवान् राम मुस्कराए और बोले, 'पवनपुत्र ! तुम्हारे घमंड को गलाने के लिए, मुनि-रूप में मैंने वह चमत्कार तुम्हें दिखाया था। देखो ! वह मुद्रिका तो मेरी अंगुली में है।'

जब हनुमान जी ने भगवान् राम के ये शब्द सुने तो उनका घमंड हमेशा के लिए समाप्त हो गया। आज वे भगवान् राम के सामने हार गए थे। परन्तु उन्हें इस हार में जो आनन्द आ रहा था उतना आनन्द तो अपनी पहली जीत में भी नहीं आया था। उन्होंने विनम्र दृष्टि भगवान् राम पर डाली और उनके चरणों में गिर पड़े। भगवान् राम ने उन्हें स्नेह से उठाया और अपने गले से लगा लिया।

घमंडी का सिर नीचा

पांडव पांच भाई थे। उनमें से एक का नाम था— भीमसेन। भीमसेन बहुत ही बलवान योद्धा थे। एक बार की बात है। उन्हें अपनी ताकत पर बहुत घमंड हो गया। उस समय वे वनवास-काल में गन्धमादन पर्वत पर अपने दिन काट रहे थे। प्रातःकाल का समय था। अचानक एक

हजार पंखुड़ियों वाला कमल का फूल पूरब दिशा में उड़ता हुआ आया और द्रौपदी की गोद में गिर गया। फूल बहुत ही सुन्दर था, उसने द्रौपदी के मन को मोह लिया। उसमें एक अद्‌भुत रौनक थी। द्रौपदी ने भीम से उसी प्रकार का एक और फूल लाने के लिए इस प्रकार इच्छा जाहिर की, 'आर्यपुत्र ! मुझे इस फूल को देखने से बेहद सुख मिल रहा है। मैं इसी प्रकार का एक फूल और चाहती हूं।'

भीम ने कहा, 'यह कौन सी बड़ी बात है। मैं अभी कुछ ही देर में ऐसा ही फूल लाकर तुम्हें अवश्य दूंगा।' इतना कहकर भीमसेन वायुवेग से पूरब दिशा को चल पड़े।

चलते समय उन्होंने सबसे पहले सिंह-गर्जना की। उनकी भयानक गर्जना से बाघ अपनी गुफा को छोड़कर भागने लगे। जंगली जीव इधर-उधर छिपने लगे। पक्षी भयभीत होकर उड़ने लगे और हिरणों के झुंड घबराकर चौकड़ी भरने लगे। उनकी गर्जना से चारों दिशाएं गूंज गईं। वे लगातार आगे बढ़ते जा रहे थे। बढ़ते चलते गए। आगे चलने पर गन्धमादन की चोटी पर उन्हें एक घना बन मिला। भीमसेन ने एक और भयंकर गर्जना की। और उस वन के अन्दर घुस गए। वन बहुत घना था। रास्ता तंग था।

अचानक भीमसेन की नजर एक वानर पर पड़ी। वह

बीच रास्ते में लेटा हुआ था। भीमसेन जैसे ही उसके पास पहुंचे, उन्होंने एक बार फिर सिंह-गर्जना की। वृद्ध वानर ने अपनी आंखें खोलीं और बोला, 'भैया ! मैं तो रोगी हूं। यहां बड़े आनन्द से सो रहा था। तुमने आकर मुझे क्यों जगा दिया? तुम जैसे समझदार और बलवान पुरुष को जीव-जन्तुओं पर दया करनी चाहिए। आगे का रास्ता पार करना बहुत कठिन है। तुम्हें अब आगे नहीं जाना चाहिए। तुम मीठे कन्द-मूल-फल खाकर यहीं से लौट जाओ। आगे जाने से तुम्हारे प्राण संकट में पड़ सकते हैं। तुम्हें अनेक भयानक जानवरों का सामना करना पड़ सकता है।'

भीमसने ने कहा, 'मैं मरूं या बचूं। इस बारे में मैं तुमसे तो पूछ नहीं रहा। तुम मेरे रास्ते में से हटो और रास्ता छोड़ दो।'

वानर ने उत्तर दिया, 'मैं वृद्ध हूं और रोगी हूं। तुम्हें जाना ही है तो मुझे लांघ कर निकल जाओ।'

वानर की बात सुनकर भीम बोले, 'सभी प्राणियों में ईश्वर का निवास है। मैं किसी को लांघ कर उसका अनादर नहीं करना चाहता।'

वानर ने कहा, 'तो मेरी पूंछ पकड़कर रास्ते में से हटा दो और निकल जाओ।'

वानर का इतंना कहना था कि भीम ने बड़े घमंड के साथ बाएं हाथ से उसकी पूंछ पकड़कर बड़े जोर से

खींची परन्तु पूंछ टस-से-मस नहीं हुई। भीम का मन क्रोध से भर गया। उसने दूने जोश में आकर दाएं हाथ से उस वानर की पूंछ को खींचना शुरू किया। परन्तु फिर भी पूंछ टस-से-मस नहीं हुई। अब क्या था, भीम का गुस्सा और बढ़ गया। उसने दोनों हाथों से पूरा बल लगाकर पूंछ को खींचा परंतु भीम को मुंह की खानी पड़ी। भीम का मस्तक लज्जा से झुक गया। उसका घमंड चूर-चूर हो गया। भीम अब समझ गए थे कि यह वानर कोई मामूली वानर नहीं है। अत : भीम उसके चरणों में गिर पड़े और गलती के लिए क्षमा मांगने लगे। वानर ने उन्हें क्षमा कर दिया। भीम ने नम्रता से वानर से पूछा, 'क्या मैं आपका परिचय जान सकता हूं ?'

'मुझे राम-भक्त हनुमान कहते हैं।' वानर ने सविनय उत्तर दिया।

भीमसेन ने पूछा, 'आप इस घने जंगल में यहां क्यों पड़े हुए हैं ?'

हनुमान बोले, 'महाबली ! मैं तो इसी वन में अनेक वर्षों से रह रहा हूं। आज मुझे पता चला कि तुम इस भयानक रास्ते पर बढ़ते चले आ रहे हो। मैंने सोचा कि इससे आगे स्वर्ग के रास्ते में जाना तुम्हारे लिए खतरनाक है। यही सोचकर मैं तुम्हारे रास्ते में लेट गया था।'

भीम ने अनुरोध किया, 'पवन-सुत ! मैं आपका वह विशाल रूप देखना चाहता हूं जो आपने लंका में धारण

किया था।'

'जैसी तुम्हारी इच्छा' कहते हुए हनुमान ने अपना आकार विशालकाय कर दिया। उनके विशाल शरीर को देखकर भीम चकित रह गए।

इसके बाद भीम ने हनुमान से निवेदन किया, 'आपने मुझ पर इतनी कृपा की है, मुझे आप ऐसा उपाय और बतायें कि मैं सहस्र पंखुडियों वाला कमल का फूल लाकर द्रौपदी से अपना वायदा पूरा कर सकूं।'

हनुमान ने कहा, 'आप इसी मार्ग पर सीधे चले जाएं। आपके रास्ते में कोई बाधा नहीं आएगी। अन्त में आपको एक सरोवर मिलेगा। जिसमें इस प्रकार के कमल के फूल खिले होंगे।' भीम हनुमान द्वारा बताये मार्ग पर बढ़ते गए। अन्त में उन्हें सरोवर मिला। वहां की मनोहर सुन्दरता को देखकर भीम बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने सरोवर में से एक फूल तोड़ा और फिर लौट पड़े। लौटते समय भीम ने हनुमान के फिर दर्शन किए।

हनुमान की महानता को देखकर भीम का मस्तक श्रद्धा से झुक गया। इतना ही नहीं, हनुमान ने भीम सेन को अनेक उपदेश भी दिए और कहा, 'कभी भी अपनी शक्ति का घमंड नहीं करना चाहिए। घमंडी का सिर हमेशा नीचा होता है।'

उसके बाद वहां से चलते समय भीम ने हनुमान जी से निवेदन किया, 'बजरंगबली मुझे ऐसा आशीर्वा

Institute of A...
DATE 14.1.2.

और दीजिए जिससे मैं आपको हमेशा याद रख सकूं।'
तब हनुमान जी ने भीमको वरदान दिया कि महाभारत युद्ध के समय, मैं अर्जुन की पताका पर बैठकर तुम लोगों की सहायता करूंगा।

मायावी सरोवर

एक बार की बात है। नारद जी घूमते-घामते, बीणा बजाते हुए भगवान् विष्णु के पास पहुंचे। उस समय विष्णुजी लक्ष्मी जी के साथ बातें करने में मग्न थे। नारद जी को आते हुए देखकर लक्ष्मी जी उनके सादर-सत्कार के लिए फल-फूल लेने के लिए चली गईं। नारद जी को यह बात अच्छी न लगी। वे अपने मन की बात विष्णुजी को बताते हुए बोले, 'भगवान् मुझे आता देखकर लक्ष्मी जी आपके पास से अलग क्यों चली गईं ? क्या वे नहीं जानतीं कि मैं एक ऋषि हूं ? इन्द्रियाँ मेरे वश में हैं। माया और क्रोध मेरी गुलामी करते हैं ?'

विष्णु जी ने मुस्कराते हुए कहा, 'नारद जी ! इसमें बुरा मानने की कोई बात नहीं। आदर्श पत्नी का धर्म है कि यदि उसके घर में कोई अतिथि आ जाये तो उसे अपने पति और अतिथि की बातें नहीं सुननी चाहिए। उसे तुरन्त अतिथि के स्वागत-सत्कार के लिए जल-पान आदि की तैयारी में लग जाना चाहिए। आपका यह कहना कि आपने माया को भी जीत लिया है, यह बात बिल्कुल असंभव है।'

'क्यों ?' नारद जी ने कहा।

विष्णु जी बोले, 'नारद जी ! बड़े-बड़े योगी और

तपस्वी भी माया को नहीं जीत पाये हैं। यह ईश्वर की तरह ही कण-कण में समायी हुई है। इसमें पूरे संसार को धारण करने की शक्ति है। यह अनेक रूपा है। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी इसके जाल से नहीं बच पाये हैं। अगर आज माया के मोहक जाल को देखना चाहें तो आपको मेरे साथ पृथ्वी-लोक में चलना होगा।'

'इसका मतलब यह है कि आप मुझे माया का सामना करने की चुनौती दे रहे हैं।' नारद जी ने कहा।

विष्णु जी बोले, 'जैसा आप मान लें।'

नारद जी ने कहा, 'मैं तैयार हूं।' फिर क्या था, भगवान् विष्णु देवर्षि नारद के साथ गरुड़ पर सवार होकर वहां से भूलोक के लिए चल दिए। कुछ ही देर में वे पृथ्वी-लोक पर कान्यकुब्ज नगर के पास पहुंच गए। वहां पर उन्हें एक स्वच्छ और सुन्दर सरोवर दिखाई दिया। अनेक कमल के फूल सरोवर की शोभा बढ़ा रहे थे। सारस और हंस— जैसे पक्षियों की मधुर ध्वनि का संगीत मन को मोह लेता था। सरोवर को देखकर विष्णु जी ने नारद जी से कहा, 'देवर्षि ! पहले इस स्वच्छ तालाब में स्नान कर लें तब हम इस श्रेष्ठ नगरी कान्यकुब्ज में चलेंगे।' ऐसा कहते हुए विष्णुजी ने नारद जी की वीणा और मृगछाला अपने हाथ में थाम ली और नारद जी से कहा, 'पहले आप स्नान कर लें।'

नारद जी ने जैसे ही सरोवर में डुबकी लगाई, उनका

शरीर एक सुन्दर युवती में बदल गया। और विष्णु जी उसी क्षण उनकी वीणा और मृगछाला लेकर आकाश मार्ग से अपने द्वीप को चले गए।

नारद जी पर माया का जादू होने के कारण, वे अपने पुराने ज्ञान को भूल गए। वे उस तालाब से बाहर निकल आए और तालाब के किनारे खड़े वृक्ष के नीचे बैठ गए। वे मन-ही-मन में सोचने लगे। इसी बीच कान्यकुब्ज के राजा तालध्वज अपने अनुचरों के साथ वहां आ पहुंचे। उन्होंने सरोवर के किनारे पर बैठी सुन्दरी को देखा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उन्होंने उस युवती से पूछा, 'रमणी ! तुम कौन हो ? तुम्हारे पिता का क्या नाम है ? तुम कहां की रहने वाली हो? रूप और यौवन से भरपूर तुम यहां अकेली क्यों बैठी हो ? तुम्हारा विवाह हो चुका है या नहीं ? यदि नहीं हुआ है तो क्या तुम मेरी पत्नी बनकर कान्यकुब्ज की रानी बनना स्वीकार करोगी ?'

राजा की बात सुनकर युवती ने कहा, 'राजन ! मुझे अपने बारे में कुछ भी पता नहीं है। मेरे पिता कौन हैं, मैं नहीं जानती ? मैं कहां की रहने वाली हूं, मैं यह भी नहीं जानती ? मुझे इस सरोवर पर कौन लाया, मैं यह भी नहीं जानती ? अब तो मैं आपके ही अधीन हूं। आप ही मेरे रक्षक हैं। आप जिस रूप में चाहें, मुझे स्वीकार कर सकते हैं।'

युवती के यह वचन सुनकर राजा तालध्वज बहुत खुश हुए और उस सुन्दरी को अपने राजमहल में ले आए। राजा ने शुभ मुहूर्त में उसके साथ विवाह भी कर लिया। अब वह कान्यकुब्ज की रानी बन गई थी।

राजा अपनी रानी से अपार प्रेम करने लगे। राजा के साथ अटूट प्रेम में बंधे उसे कई साल हो गए। उनके प्रेमबन्धन और माया-मोह ने सुन्दरी का रहा-सहा ज्ञान भी समाप्त कर दिया। वह बार-बार यही सोचकर खुश होती रहती थी, 'ये मेरे पति देव हैं। मैं इनकी पत्नी हूं। अन्य रानियों की तुलना में ये मुझे बहुत प्यार करते हैं और मैं पटरानी भी हूं।'

इसके सिवा रानी ने और कुछ सोचने की आवश्यकता ही महसूस नहीं की। इस प्रकार संसार के माया-मोह में फंसे दोनों के बारह साल एक क्षण के समान बीत गए। इसी बीच रानी के बारह पुत्र उत्पन्न हुए। माया के वशीभूत हो उस रानी को बस इतना ही ध्यान रहता था कि, 'मैं अच्छे आचरणों वाली एक पवित्र नारी हूं। मेरे बहुत से पुत्र हैं। मेरा जीवन इस संसार में धन्य है।'

अचानक एक दिन पड़ोसी राजा ने तालध्वज के राज्य पर चढ़ाई कर दी। उससे युद्ध करने के लिए राजा तालध्वज भी अपने पुत्रों और पौत्रों सहित अपनी सेना लेकर युद्ध के लिए निकल पड़े। दोनों ओर से घमासान युद्ध हुआ। राजा तालध्वज के सभी पुत्र और कई पौत्र

युद्ध में मारे गए। निराश होकर राजा घर लौट आए। रानी को जब यह समाचार मालूम हुआ तो उसके दुख का ठिकाना न रहा। उसका दिल कांप गया। वह युद्ध-भूमि में पहुंच कर विलाप करने लगी, 'हे पुत्रो ! तुम कहां चले गए ? समय कितना कठोर है ? मैं तुम्हारे बिना कैसे जीवित रहूंगी ?'

रानी इस प्रकार से विलाप कर ही रही थी कि इसी बीच भगवान् विष्णु एक वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण करके वहां पहुंच गए और रानी को समझाने लगे, 'कोयल के समान मधुर बोलने वाली सुन्दरी ! तुम क्यों रो रही हो ? यह संसार तो केवल एक भ्रम है। पति, पुत्र आदि के मोह में फंसने के बाद ऐसा लगता है कि सब-कुछ यहीं है। जरा सोचो, तुम कौन हो ? ये किसके पुत्र हैं ? यह तो सब माया का खेल है। उठो और रोना छोड़ दो। मृत पुत्रों और पौत्रों के लिए सभी तीर्थों की यात्रा करो।'

इस प्रकार बूढ़े ब्राह्मण के समझाने-बुझाने पर रानी को कुछ शान्ति मिली। और वे राजा तालध्वज के साथ तीर्थ स्थानों की यात्रा के लिए चल दीं। इस यात्रा में वृद्ध ब्राह्मण भी उनके साथ था। वृद्ध ब्राह्मण राजा और रानी को एक तीर्थ-स्थान के सरोवर पर ले गया। वहां जाकर उसने कहा, 'रानी ! आपके कार्य करने का समय आ गया है। इस पवित्र सरोवर में स्नान करो। पुत्रों और

पौत्रों के शोक को भूल जाओ। यह जन्म-मरण तो चलता ही रहता है। अनेक जन्मों में न जाने तुम्हारे कितने पुत्र, भाई, पिता आदि मर चुके हैं। उनमें से तुम किस-किस का शोक मनाओगी ? यह सब मन का भ्रम है, फिर भी तुम उनके उद्धार के लिए इस पवित्र सरोवर में स्नान करो।

ब्राह्मण के वचनों से रानी को धैर्य का अनुभव हुआ। रानी ने उस सरोवर में स्नान के लिए एक डुबकी लगाई। उस समय राजा तालध्वज सरोवर के तट पर खड़े थे। अचानक कई चमत्कार देखकर राजा तालध्वज के आश्चर्य और दुख की सीमा न रही। राजा ने देखा कि वृद्ध ब्राह्मण के स्थान पर विष्णु भगवान् सरोवर के किनारे पर खड़े हैं। उनके हाथों में एक वीणा और मृगछाला है। उसकी रानी सरोवर से गायब है। अब उसके स्थान पर सरोवर में एक पुरुष स्नान कर रहा है।

उसी क्षण विष्णु जी ने सरोवर में स्नान करने वाले पुरुष को पुकारते हुए कहा, 'नारद जी ! यहां आओ। जल में खड़े क्या कर रहे हो ?'

वह पुरुष भी चकित होकर सोचने लगा, 'अरे ! मैं तो अभी एक सुन्दर रानी के रूप में था। एकदम पुरुष कैसे हो गया ?' उसके आश्चर्य की सीमा न रही।

इधर राजा तालध्वज अपनी पत्नी को सरोवर में न पाकर अत्यन्त व्याकुल हो गए। वे विलाप करने लगे।

उन्होंने समझा कि उनकी रानी जल में डूबकर मर गई है। उनका शोक और भी बढ़ गया और वे पागलों की भांति रोने लगे। तब विष्णु जी ने उन्हें ढाढस बंधाया और उनके मोह का छुटकारा किया। उसी समय राजा के मन में ज्ञान का सूरज उदय हो गया। उन्होंने व्रत लिया कि वे अपने पौत्र को अपना राज-पाट देकर वन में तपस्या के लिए चले जायेंगे। राजा ने विष्णु भगवान् को प्रणाम किया और अपनी नगरी को वापस चले गए।

उसके बाद नारद जी के मुख पर मधुर मुस्कान खेल गई। उन्होंने विष्णु भगवान् से कहा, 'भगवन् ! आप भी धन्य हैं, आपने मुझे भी ठग लिया। मैं तो माया की असीम शक्ति से अनजान ही था। आपने मेरा सारा घमंड चूर-चूर कर दिया। सुन्दर युवती का रूप धारण करने के बाद मेरा सारा ज्ञान समाप्त हो गया था और मैं माया-मोह में लिप्त हो गया था।'

भगवान् विष्णु नारद जी की हार पर मुस्कराकर बोले, 'यह संसार एक मायावी सरोवर है। जो व्यक्ति इसके मोह-जाल में डूब जाता है वह अपनी सुध-बुध खो बैठता है और जो कमल की नाईं इस जल से ऊपर रहता है, वह अपने ज्ञान को माया के सरोवर से बचाए रखता है। अपना जीवन सफल कर जाता है।'

'भगवन् ! आप धन्य हैं। आप जीते, मैं हारा।' यह कहते हुए, नारद जी अपना अहंकार त्याग कर हाथ में

वीणा लेकर हरि का गुणगान करते हुए आगे चले गए।

Indian Institute of Advanced Study
ACC. NO. 110616
DATE 14.12.2003
SHIMLA

Library IIAS, Shimla
H 028.5 Se 56 M
00110616